DOI: 10.51220/hjssh.v4i1.9

Himalayan J. Soc. Sci. & Humanities, Vol 4 pp. 91-106, 2009

पद्म पुराण के सृष्टि खण्ड का धार्मिक विवेचन

कुसुम डोबरियाल

संस्कृत विभाग, हे0न0ब0ग0 वि0वि0 परिसर, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखण्ड

Received 25-03-2009 Accepted 25-11-2009

ABSTRACT

धार्मिक सहिष्णुता का साम्राज्य भारत वर्ष में पुराणों के कारण ही प्रतिष्ठित हुआ है। वैष्णव पुराण शिव की निन्दा नहीं करता, प्रत्युत शिव को भी हरि के रूप में ही ग्रहण करता है। ब्रह्मा से इन दोनों देवों का एकत्व पुराणों में अभीष्ठ है। विष्णु भक्ति के मुख्यतया प्रतिपादन होने पर भी नारदीय पुराण ने स्पष्टतः शिव, विष्णु तथा ब्रह्मा का एकत्व प्रतिपादक किया है। धार्मिक औदार्य पुराणों का लक्ष्य हैं पौराणिक धर्म कोई नवीन उत्पन्न होने वाला धर्म नहीं है जो वेद प्रतिपादित मौलिक धर्म से विभेद रखता हो। मूलतत्व समस्त वैदिक ही है। केवल परिवर्तित स्थिति की आवश्यकता पूर्ण करने के लिए कतिपय प्राचीन विषयों का परिहार और कतिपय नवीन विषयों को ग्रहण किया गया है। प्रस्तुत लेख में पद्म पुराण के सृष्टि खण्ड में वर्णित् धार्मिक विशिष्टताओं का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

Keywords :- *पदम् पुराण, सृष्टिखण्ड, देवता, धर्म रक्षा, पापशमन*

वैदिक युग में कर्मकाण्ड पर विशेष आग्रह था, पौराणिक युग में भक्ति को ऊपर विशेष महत्त्व दिया गया। इस प्रकार के सामान्य अन्तर को देख कर यह धर्म एक नवीन धारा का प्रतिपादक माना जा सकता है। अवश्य ही वैदिक देवों में अधिकांश को पुराणों ने अपने क्षेत्र से हटा दिया। केवल पांच देवों को ही उसने महत्त्व देकर ग्रहण किया। ये देव है—विष्णु, ब्रह्मा, महेश, गणेश तथा सूर्य। पुराणों का उद्देश्य वेद के तत्वों को जन साधारण तक पहुंचाना है। इसकी सिद्धि के लिए उसने सरल संस्कृत वाणी को अपना माध्यम बनाया है। केवल भारत के प्रान्तों में ही नहीं, प्रत्युत भारत के बाहर अनेक द्वीप—दीपान्तर और देश—देशान्तरों में भी पुराणों ने भारतीय सनातन वैदिक विचारधारा, कर्मधारा और भावधारा को प्रवाहित किया है। पुराणों की कृपा से सनातन वेदों ने भी सभी श्रेणियों के नर—नारियों के जीवन को नियंन्त्रित करके परम कल्याण, विमल प्रेम तथा विशुद्ध आनन्द के मार्ग में प्रवृत्त करने का अधिकार प्राप्त किया है।

पुराणों का प्रधान गौरव यह है कि वेद ने जिस परमतत्व को ऋषियों के भी इन्द्रिय, मन और बुद्धि के समीप लाकर रख दिया, वेदों के सत्य, ज्ञान और अनन्त ब्रह्म ने पुराणों में सौंदर्य

© SHARAD

मूर्ति तथा पतितपावन भगवान के रूप में अपने को प्रकाशित किया। वेदों ने घोषणा की है कि ब्रह्म सब प्रकार के नाम, रूप तथा भावों से परे हैं। पुराण कहते हैं कि ब्रह्म सर्वनामी, सर्वरूपी और सर्वभावमय है। पुराणों ने यह उद्‌घाटित किया है कि एक ही परमतत्व भगवान विभिन्न रूपों और नामों में विचित्र शक्ति, सामर्थ्य तथा सौन्दर्य को प्रकट कर सम्पूर्ण संसार में लीला–विलास कर रहे हैं तथा प्रत्येक उपासक–सम्प्रदाय किसी न किसी रूप में इसी भगवान की उपासना करके कृतार्थता को प्राप्त करता है। इसी कारण भारत के समग्र धार्मिक–सम्प्रदाय एकत्व के सूत्र में बंधे हुए है। इस प्रकार पुराणों में वैदिक तत्वों को रोचक रूप से जन साधारण के सामने रखा गया है। वैदिक धर्म को लोकप्रिय बनाने का श्रेय इन्हीं पुराणों को प्राप्त है। वेद और पुराण एक ही अभिन्न सनातन धर्म के भिन्न काल में अविभूत होने वाले विशिष्ट ग्रन्थ हैं।

धर्मस्वरूप–

महाभारत में 'धर्म' की व्यापक तथा विशद् कल्पना अंगीकृत की गई है। इस विश्व के नाना विभिन्न अवयवों को एक सूत्र में, एक श्रृंखला में, बांधने वाला जो सार्वभौमिक तत्व है, वहीं धर्म है। हिन्दू धर्म किसी की किन्हीं विशिष्ट मतवादों, उपासना के प्रकारों अथवा वाह्य आचारों को ग्रहण करने के लिए बाध्य नहीं करता। हिन्दू धर्म की सीमा के अन्तर्गत असंख्य सम्प्रदाय देखने को मिलते हैं, जिनमें साधना के भिन्न–भिन्न प्रकार तथा क्रिया–कलाप पाये जाते है। हिन्दू धर्म की आत्मा अपने आप को सार्वभौम धार्मिक दृष्टि के रूप में तथा ईश्वर सम्बन्धी सभी विवेकपूर्ण मान्यताओं तथा सब प्रकार की आध्यात्मिक साधनाओं के समादर के रूप में अभिव्यक्त करती है। अतः हिन्दू धर्म ही विश्वधर्म का सच्चा नमूना है, यह स्वरूप पुराणों के ऊपर ही आश्रित है।

एक ओर इन धार्मिक क्रियाविधियों ने सनातन वैदिक धारा से समाज को विछिन्न कर दिया और दूसरी ओर महावीर स्वामी और बुद्ध की उदार धर्मनीतियों ने समाज पर अपना वर्चस्व स्थापित किया। वैदिक धर्म की इस ह्रासोन्मुख स्थिति को पुराणकारों ने पुनः स्थापित किया इन्होंने वैदिक धर्म को कर्मकाण्ड की संकीर्णताओं से तथा वर्ग वर्ण की सीमाओं से उभार कर लोकसामान्य बनाने के लिए उदार एवं सर्वाभौम स्वरूप दिया। पुराणकार, व्यासों तथा सूतों ने वैदिक को देशव्यापी लोकधर्म बनाने के लिए उत्तर, दक्षिण तथा पूर्व से पश्चिम, भारत के विभिन्न अंचलों को भ्रमण किया और सम्पूर्ण देश में धर्मस्थानों देवालयों तथा तीर्थों की स्थापना कर जनमानस को उनके प्रति क्षीण पड़ी श्रद्धा–निष्ठा को जगाया। उन्होंने वृहत् पुराण संहिताओं का निर्माण कर विष्णु से नर रूप

नारायण और कृष्ण तथा राम जैये दयामय, अनुग्रही, हितकारी, अनुकरणीय चरित्रों की स्थापना की और जनमानस के समक्ष भक्ति–उपासना का नया आधार प्रस्तुत किया। पुराणों का धर्म पद्धति में जो सबसे बड़ी एवं अपूर्व बात को देखने को मिली है वह स्त्रियों तथा शूद्रों के विशिष्ट अधिकारों की व्यवस्था।

कृष्णद्वैपायन वेद व्यास ने महाभारत युग के उपरान्त देश की समस्त सामाजिक जीवन की तात्कालिक परिस्थितियों का पर्यालोचन करके इतिहास पुराण समन्वित एक एक ऐसे धर्म का प्रवर्तन किया, जो सर्व सामान्य के लिए उपादेय था। उन्होंने द्विजों के लिए सामान्य रूप से किन्तु स्त्रियों एवं शूद्रों के लिए विशेष रूप से कर्तव्यों तथा अधिकारों का नियमन किया। पौराणिक युग के इन धर्म व्यवस्थापक व्यासों तथा सूद्रों ने वृहत्तर भारत में धार्मिक एकता स्थापित करने के साथ–साथ राष्ट्रीय समन्वय का भी महाकार्य सम्पादित किया। उन्होंने पशुपतिनाथ, बद्रीनाथ, केदारनाथ, काशी, वैद्यनाथ तथा जगन्नाथ आदि उत्तर–पूर्वी भारत में स्थित पुरातन तीर्थों के प्रति दक्षिण–पश्चिम वासियों की श्रद्धा–निष्ठा को जागृत किया। इसी प्रकार कांची, रामेश्वर, सोमनाथ तथा दक्षिण पश्चिम के तीर्थों के प्रति उत्तर–पूर्व के निवासियों का धर्मानुराग स्थापित किया। उन्होंने सारे राष्ट्र में धार्मिक अन्तश्चेतना को जागृत किया और धार्मिक अभियान द्वारा भावनात्मक एकता स्थापित की।

पुराणों के आख्यान–उपाख्यानों के आधार लोकविश्वास–

पुराण पुरातन कथाओं तथा आख्यासिकाओं के संग्रह है। वायु–पुराण में (1/2/52) कहा गया है कि पुरातन परम्परा में रचित घटना चक्र का वर्णन करना ही पुराणों का लक्ष्य है। (पुरा परम्परां वक्ति पुराणं तेन वैस्मृतम्) न केवल भारतीय साहित्य में अपितु विश्व साहित्य में इस प्रकार की पुरातन कथाओं का समावेश सर्वत्र पाया गया है।

इस दृष्टि से विचार किया जाए तो प्रतीत होता है कि आदिम मानव जीवन के विकास क्रम का इतिहास उसके आन्तरिक विश्वासों से आरम्भ होता है। अपनी सभ्यता के अभ्यास में जब वह दर्शन तथा चिन्तन की दुरुहताओं से अपिचित था तब प्राकृतिक रहस्यों के प्रति उसमें उत्सुकता का स्फुरण हो चुका था। ये उत्सुकताएं ही उसके– विश्वास थे। आदिम मानव के इन विश्वासों को ज्ञान सम्मत ऋषियों ने सजोकर उन्हें कथाओं में निबद्ध किया। ये कथाएं संसार, ईश्वर, जीव, पाप–पुण्य, स्वर्ग–नर्क और लौकिक, पारलौकिक आदि विषयों से सम्बद्ध थी।

इन पुराणगाथाओं की अपनी विशेषता यह रही है कि मनुष्य जीवन के जितने भी क्रिया–कलाप है उन सब में ईश्वर के अस्तित्व को अनिवार्य माना गया है। इसमें संदेह नहीं है कि ये पुराण कथाएं मानव मस्तिष्क की प्रथम साहित्यिक उपज है और उनके आधार लोकविश्वास थे। उनके ग्रथन तथा कथन का भाषा में परिवर्तन अवश्य होता रहा किन्तु उनके मूल भावनात्मक आधारों में कोई विकार उत्पन्न नहीं हुआ है।

पदम् पुराण के सृष्टिखण्ड में पुलस्त्य ने भीम से सृष्टि्यादि के क्रम से नाना प्रकार के आख्यान और इतिहास आदि से युक्त धर्म–विस्तार से वर्णन किया है। 'मरुदुत्पत्ति कथानक वर्णनम्' में भी धर्म का पालन करने से व थोड़ी असावधानी करने का क्या फल होता है– दिति (कश्यप पत्नी) के वृतान्त से स्पष्ट प्रतीत होता है। देवासुर युद्ध में दैत्यों के मारे जाने पर पुत्रों के वियोग से दुखित दिति ने पुष्कर में सरस्वती नदी के तट पर तपस्या की और वशिष्टादि ऋषियों से पुत्र शोक को नष्ट करने वाला व सौभाग्य फल देने वाला व्रत पूछा जिसमें उन्होंने ज्येष्ठ पूर्णिमा का व्रत उत्तम बताया। दिति के वैसा ही करने पर कश्यप जी ने वर मांगने को कहा। तब दिति द्वारा इन्द्र को मारने वाला पुत्र मांगकर कश्यप जी ने कुछ एक वर्ष के नियम दिति को बताये। इसी बीच नियमों का पालन करने पर भी दिति एक दिन नियम का उल्लंघन कर बैठी। जिसे इन्द्र ने जान लिया और गर्भ के सात खंड कर दिये परन्तु पूर्णिमा के प्रभाव से वे मृत्यु को प्राप्त न होकर उनन्चास मरुद्गण हो गये जिन्हें इन्द्र दिति सहित स्वर्ग ले गया एवं मरुद्गणों को यज्ञ एवं पुत्रों का भागी बना दिया। इस कथानक में धर्म की परिपूर्ण व्यख्या की गई है। इसी प्रकार–गुरणादैत्यान्प्रतिधर्मभ्रंशकरोपदेशदान्' में भी देवासुर युद्ध के वर्णन में दैत्यों को जैन धर्म व बौद्ध धर्म का उपदेश देकर मोक्ष पाने वाली दीक्षा देकर उनको स्वर्ग पहुंचाने का प्रयास किया गया है। सृष्टि–खंड के ' 'आश्रम धर्म वर्णनम्' में ब्रह्मचारी, गृहस्थी, वानप्रस्थी एवं सन्यासियों के धर्मों का वर्णन किया गया है। (पद्म पुराण, अध्याय 15)।

पदम् पुराण सृष्टि–खण्ड धर्म की व्यापकता व विशद् कल्पना अंगीकृत करता है। विभिन्न उपाख्यानों में भी धर्म का स्पष्ट स्वरुप दिखाया गया है। 'नन्दायाउपाख्यानम्' में सत्य वचनों द्वारा धर्म को प्रतिष्ठित रखा गया है क्योंकि लोक एवं धर्म सत्य में ही प्रतिष्ठित है। इसी प्रकार तुलाधार का चरित्र पौराणिक साहित्य में बहुत प्रसिद्ध है। यह एक काल्पनिक कथा है जिसका उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति के लिए अपने नियमित कर्तव्य का पालन करते रहने और उसी को सर्वश्रेष्ठ धर्म माने

की शिक्षा देता है। यह (सत्य) एक ऐसा धर्म है जिसके पालन करने में किसी अन्य साधन की अपेक्षा नहीं रहती है।

पद्मपुराण में स्त्री धर्म का वर्णन सावित्र्या ब्रह्मसमीप 'प्रत्यागमनम्' नामक कथानक में किया गया है। सावित्री गायत्री से स्त्री धर्म का वर्णन करते हुए कहती है–

'न च स्त्रीणां पृथग्यज्ञौ न व्रत नाप्युपोषणं।

भर्ता यद्वदतेवाक्यं तत्तुकुर्यादिकुत्सया।।

भर्तृ निन्दां या कुरुते स्वसृनिन्दां तथैव च।

परिवांद प्रलापं वा नरकं सा तु गच्छति।।

पत्यो जीवति या नारी उपवाससव्रतं चरेत।

आयुष्यं हरते भर्तृमृता नरकमृच्छति।।'

इसी प्रकार पतिव्रता धर्म के महात्मय का वर्णन करते हुए भगवान नारोत्तम से कहते हैं–

पतिव्रता पतिप्राणा सदा पत्युर्हिते रता।

देवानशमपिसाराध्या मुनीनाम् ब्रह्मवादिनाय।।

धवस्यैकस्य या नारी लोके पूज्यतमा स्मृता।

तस्या संमानने गुर्वा निभृता न भविष्यति।।

ऐसा ही एक पूर्त धर्म पद्म पुराण द्वारा प्रशंसित धर्म, (53/6–7) माना गया है , जैसे–लोक–कल्याण के लिए वापी, कूप, तालाब खोदना, मन्दिर का निर्माण करना, याचकों को अन्न प्रदान करना, पूर्त धर्म कहलाता है और इसी धर्म का अनुष्ठान पुराणों के द्वारा बहुत प्रशंसित है। पुराणों में ऐसे बहुत से विचार हैं जो बिल्कुल आधुनिक प्रतीत होते हैं। जैसे समाज की सेवा तथा आर्तो, पीड़ितों के दुःख का अपनयन सर्वश्रेष्ठ धर्म के रूप में परिगणित किया जाता है। परोपकार को ही मुख्य धर्म बताने वाले मार्कण्डेय, विष्णु, ब्रह्म आदि पुराण है। इसके अतिरिक्त पद्म पुराण आदिखण्ड में राजधर्म, वैश्यधर्म, विधवा धर्म, गुरुधर्म आदि का भी उल्लेख है।

देवता–

वैदिक देवता पुराणकाल तक आते– आते अपनी पूर्ण विभूति को धारण नहीं रख सके। इनमें से कुछ के स्वरूप का विलय हो गया और कतिपय अपने उदात्त रूप से च्युत होकर समानान्तर स्तर पर विचरण करने लगे। वरुण का पौराणिक रूप इस तथ्य का उज्जवल दृष्टान्त है। वैदिक युग में वरुण अत्यन्त उदात्त स्तर पर कल्पित देव थे–नितान्त न्यायप्रिय, विश्व के प्रत्येक पदार्थ के ज्ञाता तथा ऐश्वर्य सम्पन्न देव, परन्तु पुराण काल में उनमें एकदम ह्रास हो गया। कहां उनका उदात्त वैदिक रूप और कहां जलदेवता के रूप में सीमित उनका पौराणिक विग्रह वैदिक युग की तुलना में पौराणिक युग में देवों के स्वभाव–स्वरूप में कुछ अन्तर दिखाई देता है। पौराणिक देवता का रूम सगुण–साकार था। फलतः वे मनुष्यों के विशेष सन्निकट तथा सानिध्य में उपनीत हुए। वे मानव दुःख के साथ भी घनिष्ट सम्बन्ध में आवद्ध हो गए। संसार के नाना दुःखों से संतप्त मानव अपनी दुःखद गाथा सुनाने के लिए किसी सहानुभति पूर्ण देवता की खोज में था जो उसे सुने, उसे दूर करने की ओषधि प्रदान करे। ऐसे देव की कल्पना पुराणों ने की। पौराणिक देवता कहीं अम्बर में विचरणशील, जगत् के कार्यों में उदासीन व्यक्ति न थे, प्रत्युत भूतलधारी मानवों के दुःख–सुख में हाथ बांटने वाले थे। इस प्रकार वैदिक देवों की अपेक्षा व व्यक्तिगत सम्बन्ध के कारण भक्तों के बिल्कुल समीप थे। वे निर्विशेष न होकर सविशेष रूप से प्रतिष्ठित हुए।

पुराणों में समन्वय भावना के कारण 'अवतारवाद' का जन्म हुआ। जिसके साथ भक्ति का सार्वभौम राज्य पुराणों में विराजने लगा। मानव ह्रदय को विकसित करने वाली भक्ति ही एकमात्र प्रधान–उपासना मार्ग के रूप में गृहीत हुई। इस प्रकार धर्म तथा मानव स्वभाव के संवेगात्मक पक्ष पर आग्रह कर पुराण ने मानव मन की परिष्कृति के नवीन मार्ग की उद्भावना की धर्म तथा साहित्य में इस भक्ति मार्ग के योग से जो मधुरिमा, जो कोमलता आई है वह पुराण युग की एक विशिष्ट देन है।

विष्णु–

भारतीय धर्म एवं उपासना में विष्णु का सर्वोपरि स्थान है। ऋग्वेद (1/22/1), के अनुसार विष्णु सौर देवता है। अर्थात् सूर्य के ही अन्यतम रूप हैं। विष्णु नाम की निरुपित इसी तथ्य की द्योतिका है। यास्क का कथन है कि रश्मियों द्वारा व्याप्त होने के कारण अथवा रश्मियों के द्वारा

समग्र संसार को व्याप्त करने हेतु सूर्य, 'विष्णु' नाम से अभिहित किये जाते हैं। विष्णु के साथ त्रिविक्रम (तीन डगों को रखना) नाम का अनिवार्य सम्बन्ध है। विष्णु ने अपने तीन डगो–(पाद–विक्षेपों) के द्वारा सम्पूर्ण विश्व को नापा था। इस वैशिष्ट्य का प्रतिपादक यह मंत्र प्रत्येक संहिता में उपलब्ध होता है–

इदं विष्णुर्विचक्रमें त्रेधा निदधे पदम्।

समूढ़मस्य पांसुरे।।

ब्राह्मण युग में यज्ञसंस्था का विपुल विकास सम्पन्न हुआ और इसके साथ ही देवमण्डली में विष्णु का महत्त्व भी पूर्वापेक्षया अधिकतम हो गया। विष्णु की एकता यज्ञ के साथ की गई–यज्ञौ वै विष्णु। ऋत्विजों की दृष्टि में विष्णु समस्त देवताओं में श्रेष्ठ तथा पवित्रमय माने जाने लगे। इस युग में विष्णु के तीन डगों का सम्बन्ध स्पष्ट रूप से पृथ्वी, अन्तरिक्ष तथा आकाश से स्थापित किया गया और इनका अनुसरण यज्ञ में यजमान के द्वारा भी किया जाने लगा। ब्राह्मण ग्रन्थों में, विष्णु असुरों से पृथ्वी तथा सर्वशक्तिमत्ता छीनने वाले गौरवशाली देवता के रूप में प्रतिष्ठित होते हैं।

विष्णु का पौराणिक स्वरूप–

पद्मपुराण सृष्टिखंड में विष्णु के स्वरूप का निरुपण हुआ है। विष्णु सगुण भी है तथा निर्गण भी। पुराणों ने इस जगत् के मूल में वर्तमान नित्य, अजन्मा, अक्षय, एकरस तथा हेम के अभाव से निर्मल परब्रह्म को ही विष्णु संज्ञा दी है। वह प्रकृति से भी श्रेष्ठ, परमश्रेष्ठ अन्तरात्मा में स्थित परमात्मा, रूप वर्ण नामादि विशेषणों से विरहित तथा षट् विकारों–जन्म, बुद्धि, स्थिति, परिणाम, क्षय तथा विनाश से शून्य रहता है। उसके विषय में केवल इतना ही कहा जाता है कि, वह सर्वदा है–

शक्यते वस्तुं यः सदास्तीति केवलम्। (विष्णु पुराण 1/2/11)

जिस समय महाप्रलय उपस्थित था, तब न तो दिन था, न रात्रि, न आकाश था न पृथ्वी, न इसके अतिरिक्त ही और कुछ था। उस समय स्रोत आदि इन्द्रियों का तथा बुद्धि का अविषय एक प्रधान ब्रह्म और पुरुष था। तात्पर्य यह है कि नारदीय सूक्त में "तर्देक" की संज्ञा से जिस ब्रह्म का कीर्तन किया है वही विष्णु है। इस विष्णु के दो रूप है–

(क) उपाधि रहित ब्रह्म के प्रथम रूप हैं– प्रधान और पुरुष,

(ख) दूसरा रूप है–काल। यही दोनों सृष्टि तथा प्रलय को अथवा प्रकृति व पुरुष को संयुक्त तथा नियुक्त करता है।

शिव–

विष्णु के साथ शिव हिन्दुओं के प्रधान देवता हैं, परन्तु इस प्रधानता का क्रमिक विकास धीरे–धीरे शताब्दियों में सम्पन्न हुआ है। ऋग्वेद में रुद्र का स्थान अग्नि, वरुण, इन्द्र आदि देवताओं की अपेक्षा बहुत ही कम महत्त्व का है। परन्तु यजुर्वेद और अथर्ववेद में, रुद्र का स्थान महत्त्वपूर्ण है । ब्राह्मण काल में रुद्र का महत्त्व और भी बढ़ता गया है। उपनिषदों में रुद्र की महत्ता का परिचय भली भांति मिलता है। छान्दोग्य (3/7/4) वृहदारण्यक (3/1/4) आदि प्राचीन उपनिषदों में रुद्र के वैभव तथा प्रभाव का वर्णन उपलब्ध होता है। शिव के दो रूप होते हैं।

1. अगुण
2. सगुण

इनमें से अगुण रूप तो निर्विकारी, सच्चिदानन्द स्वरूप तथा परब्रह्म कहलाता है तथा सगुण रूप जीव की उत्पति, स्थिति तथा प्रलय का कर्ता है और इस कार्य में शिव एक होते हुए भी त्रिधा भिन्न माने जाते हैं। विष्णु रूप से वह विश्व के रक्षक हैं, ब्रह्मा रूप से उत्पादक और हर रूप में संहारकर्ता हैं। शिव पुराण का कथन है कि शिव तथा विष्णु में किसी प्रकार का अन्तर तथा पार्थक्य नहीं है। उदाहरणार्थ–शिवपुराण ने प्रसिद्ध वेदान्त सम्मत दृष्टान्तों को अपनाकर इस तत्व की युक्तिमत्ता प्रदर्शित की है। सुवर्ण तो नाना अलंकारों के लिए प्रयुज्यमान होकर भी एक ही होता है– आकार की भिन्नता होने पर भी वस्तुत्व की भिन्नता नहीं होती। मृत्तिका की भी यही दशा है। पार्थिक द्रव्यों की भिन्नता होने पर भी मृत्तिका में एकता विद्यमान रहती है। शिवत्तत्व का एकत्व भी इसी प्रकार है। (शिवपुराण, रूद्र संहिता, 9/35–36)।

सुवर्णस्य तथैकस्य वस्तुत्वं नैव गच्छति।
अलंकृति–कृते देव मानभेदो न वस्तुतः।।
यथैकस्या मृदोभेदे नानापत्रै न वस्तुतः।
कारणस्यैव कार्यस्य सन्निध्ससनं निदर्शनम्।।

शिव सत्य, ज्ञान तथा अनन्तरूप है और सबका मूल है। शिव जब सत्व, रज तथा तम आदि गुणों से युक्त होकर सृष्ट्यादि कार्यों का निष्पादक होता है, तभी वह ब्रह्मादिक नामों के द्वारा अभिहित किया जाता है। शिव के वाम अंग से हरि, दक्षिणांग से ब्रह्मा तथा हृदय से रूद्र की उत्पत्ति होती है। इस प्रकार तीनों के उदय का मूल आधार शिव ही है। ब्रह्म अर्थात् शिव अद्वय, नित्य, अनन्त तथा कालुष्य रहित होता है। पुराण ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र में अभिन्नता मानता है। पुराणों में शिव की आठ मूर्तियों का उल्लेख अनेकत्र मिलता है। शिव के नाम तो वेदों से ही लिए गये हैं परन्तु उनका भिन्न मूर्तियों के साथ अभिधान रूप से सम्बन्ध बतलाना पुराण का काम है। शिव में ही प्राणियों का लय होता है। इसलिए वे प्रलय कहलाते है। शिव कैलास अथवा शिवलोक में निवास करते हैं। शिव की आठ मर्तियाँ एवं उनके नाम इस प्रकार हैं।

क्र.स.	मूर्ति	नाम
1.	पृथ्वी–आत्मक शिव का नाम	शर्व
2.	जलात्मक	भव
3.	अग्नि	पशुपति
4.	वायु	ईशान
5.	आकाश	भीम
6.	सूर्यात्मा	रुद्र
7.	सोमात्मा	मदादेव
8.	यजमानमूर्ति	उग्र

श्रोत : लिंग पुराण (उत्तरार्ध)

पुराणों ने शिव भक्ति के अनेक प्रकार बताये हैं। मुख्यतया वह तीन प्रकार की होती है–कायिक, वाचिक तथा मानसिक जो काम, वाक्, तथा मन से सम्बन्ध रखते है। इसी प्रकार लौकिकी, वैदिकी तथा आध्यात्मिकी ये तीन भेद भी किये गये है।

गणपति–

ऐतिहासिक दृष्टि से विकास सिद्धान्त के अनुसार प्रायः सब पौराणिक देवताओं का मूल रूप

वेद में मिलता है। धीरे–धीरे ये विकास को प्राप्त होकर कुछ नवीन रूप में होकर दृष्टिगोचर होते हैं। इनका नाम वेदों में गणेश न होकर 'ब्रह्मणस्पति' तथा पुराणों में गणेश है। ऋग्वेद के द्वितीय मण्डल का यह सुप्रसिद्ध मंत्र गणपति की ही स्तुति में है–

गणनां त्वा गणपतिꣳ हवामहे
कवि कविनामुपमश्र वस्तमम्।
ज्येष्ठराजं ब्रह्मणां ब्रह्मणस्पत् आ
नमः श्रणवन्नूतिभिः सीद सादनम्।।''

इसमें गणेश जी को 'ब्रह्मणस्पति' कहा गया है। ब्रह्मन शब्द का अर्थ वाक्–वाणी है। अतः ब्रह्मणस्पति का अर्थ वाक्पति–वाणी का स्वामी हुआ। गणपति शब्द का अर्थ है– 'गंणों का पति' इसी अर्थ में गणों के ईश होने से इन्हें गणेश भी कहते हैं। अतः गणेश समस्त देवतावृन्द के रक्षक हैं। महत्तत्व आदि जितने सृष्टि–तत्व है उनके भी स्वामी है। गण की दूसरी व्यख्या से जगत्कत्तृत्व और भी स्पष्ट प्रतीत होता है। मनोवाणीमय सकल दृश्य–अदृश्य विश्व का वाचक 'ग' अक्षर है तथा मनोवाणीविहीन रूप का ज्ञान 'ण' अक्षर अराता है। इस प्रकार गण शब्द के द्वारा जितना मनोवाणी समन्वित तथा तद्विरिहित जगत है, सबका ज्ञान हमें होता है। गणपति का उल्लेख अनेक पुराणों में पाया जाता है। पद्म पुराण में गणेश को विघ्नविनाशक कहा गया है। गणेश जी पुराणों में अनेक नामों से पुकारे जाते हैं। जैसे– एकदन्त, वक्रदन्त, शूपकर्ण, मूषकवाहन आदि। चीन तथा जापान में गणेश का विशेष प्रभाव है। चीन में इनके 'विनायक' तथा 'कांगी–तेन' नाम विख्यात हैं।

पुराण में जिस देवता को हम ब्रह्मा या ब्रह्मदेव के नाम से पुकारते हैं वह वेदों में 'प्रजापति' के नाम से अभिहित किये गये हैं। ऋग्वेद के सूक्त (10/121) में प्रजापति की प्रख्याति आकाश और पृथ्वी, जल तथा समस्त जीवित प्राणियों के सृष्टा के रूप में की गई है। ये देवों के पिता हैं (शतपथ 11/1/6/14) क्षीरसागर में शेषशायी नारायण के नाभि कमल के ऊपर ब्रह्मा का जन्म स्वतः होता है। इसलिए वे 'स्वयंभू' नाम से अभिहित किये गये हैं। सृष्टि का कार्य ब्रह्मदेव का अपना विशिष्ट कार्य है। सरस्वती उनकी पत्नी है तथा हंस उनका वाहन है। वे ज्ञान स्वरूप परमेश्वर अजन्मा, सम्पूर्ण जीवों के जन्मदाता माने गये है। त्रिदेव में ब्रह्मा प्रथम देव हैं, किन्तु 'पंचदेव' में उनका स्थान विष्णु सूर्य शिव और गणेश की अपेक्षा गौण है। विविध पुराणों में ब्रह्मा को गौण पद दिया गया है तथा विष्णु की महत्ता प्रदर्शित करने के लिए उन्हें विष्णु की नाभि सें उत्पन्न कमल

पर आसीन दिखाया गया है।

सूर्य–

सूर्यदेव पंच देवों में एक हैं। ऋग्वेद में सूर्य को जगत की आत्मा कहा गया है–

सूर्यात्मा जगतस्थुषश्च (ऋग्वेद, 1, 115, 1)

वैदिक साहित्य में सूर्य का विशद् वर्णन है और वैदिक कारणों के आधार पर ही पुराणों का विकास हुआ है। रामायण, महाभारत में भी सूर्य की उपासना की चर्चा है। सूर्योपासना का आरम्भिक स्वरूप प्रतीकात्मक था। सूर्य का प्रतीकत्व चक्र, कमल आदि से व्यक्त किया जाता था। पुराणों में सूर्य की प्रतिमा का जो विधान वर्णित है उसमें रथ की चर्चा भी है। इस प्रकार पौराणिक धर्म में, देवताओं में पंचदेव नाम विख्यात हैं।

भगवान सूर्य को पद्म पुराण के सृष्टि खण्ड में ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र का स्थान प्रदान किया गया है। बारह महीनों में भगवान सूर्य को बारह नाम दिये गये हैं– मार्गशीष में मित्र, पौष में सनातन विष्णु, माघ में वरूण, फाल्गुन में सूर्य, चैत्र मास में भानु, वैशाख में तापन, ज्येष्ठ में इन्द्र, आषाढ़ में रवि, श्रावण में गभस्ति, भादों में यम, आश्विन में हिरण्येरता और कार्तिक में दिवाकर।

मन्त्र–

'ओम् ह्रां ह्रीं सः सूर्याय नमः'। इस सूर्य मंत्र से सर्वसिद्ध होती है। पदम् पुराण में सूर्य को ब्रह्म के स्वरूप सें प्रकट हुआ ब्रह्म का ही उत्कृष्ट तेज कहा है। यह धर्मार्थ काममोक्ष को देने वाला है। यह सूर्य सत्वमय है।

जिस प्रकार मंत्र संहिताओं में पुरुष एवेदं सर्वम्' तथा उपनिषदों में 'सर्व खाल्विदं ब्रह्म, इत्यादि श्रुतियां परमात्मा सर्वस्वरूप है'– इस बात का प्रतिपादन करती हैं। ठीक वैसे ही पदम् पुराण सृष्टि खंड भी भगवान को सर्वात्मक स्वीकार करता है। परमगति को प्राप्त कराने वाले तत्वज्ञान का अव्यवहित साधन भगवद्भक्ति है। इसी तत्व के प्रतिपादन में समस्त पुराणों की अपूर्व है और यही पदम् पुराण की भी है। पद्म पुराण के प्रत्येक खण्ड में विशद् रूप से भक्ति की महिमा वर्णित है। श्री नारायण के महात्म्य का वर्णन होने से यह पुराण भक्ति का प्रतिपादक है। भगवान विष्णु ने पूर्वकाल में ब्रह्मा जी के प्रति जिसका उपदेश किया था वही पदम् पुराण है। विभिन्न देवताओं

का सामंजस्य इस पुराण में मिलता है। पंचदेव के अतिरिक्त इन्द्र, चामुण्डादेवी, लक्ष्मी, क्षेमंकरी देवी, गायत्री, कृष्ण, राम, अग्नि सावित्री, जल, कार्तिकेय, वायु, स्वाहा, आकाश, स्वधा तथा भगवान नृसिंह आदि देवताओं की भी पुण्यकथाएं हैं। इस प्रकार पदम् पुराण में बहुदेवतावाद होते हुए भी एकेश्वरवाद देखने को मिलता है क्योंकि अन्ततः सभी देवताओं का मूल एक (विष्णु) ही है।

धर्मरक्षा व पाप शमन एवं असुरों का विनाश–

प्रस्तुत पुराण के विविध उपाख्यानों में धर्मरक्षा सम्बन्धी शिक्षा दी गई है। नन्दाधेनु व्याघ्र उपाख्यान' में सत्य की महिमा का वर्णन है। नन्दा धेनु की श्रद्धा 'सत्य' में सुदृढ़ थी इसीलिए वह अपनी प्रतिज्ञानुसार यथा समय हिंसक व्याघ्र के समक्ष पहुंची, और सत्य से ही प्रभावित उस हिंसक जन्तु ने नन्दाधेनु को अभयदान ही नहीं वरन् सदा के लिए किसी प्राणी का अनिष्ट न करने का भी निश्चय किया। एक प्राणी के सत्यव्रत पालन करने से न जाने कितने अन्य लोगों को सत्य रक्षा की प्रेरणा दी। यह समस्त संसार सत्य में ही प्रतिष्ठित है और धर्म का आधार भी सत्य ही है। यह उपदेश इस उपाख्यान से परिलक्षित होता है।

महाकवि कालिदास के महाकाव्य रघुवंश में भी राजा दिलीप और रानी सुदक्षिणा की गौसेवा में कर्तव्यपरायणता का अटूट दृश्य देखने को मिलता है। सिंह को वह प्रत्येक संभव तर्क के द्वारा इसके लिए प्रस्तुत करना चाहता है कि गाय को छोड़ दे, उसे भले ही खा ले। उसकी दृष्टि में कर्तव्य का मूल प्राणों से भी अधिक है। इस प्रकार यह यह प्रसंग राजा का सत्यधर्म प्रदर्शित करता है। रघुवंश का यह कथानक मुख्य रूप से रामायण और पुराणों से लिया गया है।

ऐसी ही एक और काल्पनिक तथा तुलाधार का सत्यव्रत है जिसका उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति के लिए अपने संसारिक कर्तव्यों को पालन करते रहने और उसी को सर्वश्रेष्ठ धर्म मानने की शिक्षा देता है। इस उपाख्यान में कई प्रसंग धर्म–तत्व के सम्बन्ध में वर्णित किये गये हैं और यह निष्कर्ष निकाला है कि धर्म और पुण्य ऐसी वस्तु नहीं है जिनके लिए मनुष्य को घर और सांसारिक कर्तव्यों का त्याग करके एकान्त स्थानों में भजन–साधन करना आवश्यक है। इसके विपरीत प्रत्येक साधारण मनुष्य निम्न कर्तव्यों का पालन करके सर्वोच्च गति और आध्यात्मिक शक्ति को प्राप्त कर सकता है–

1. माता पिता की परम भक्ति भाव से सेवा।
2. अपने पति की अर्चना

3. सभी प्राणियों के साथ आत्मीयता का व्यवहार

4. मित्रों के साथ कभी द्रोह–कपट न करना

5. भगवान के चरणों में अनन्य निष्काम भक्ति रखना।

तुलाधार के प्रकरण में भी ऐसे शूद्र का उदाहरण दिया है जो खेतों से अन्न के दाने बीनकर अपना पेट भरता था और जिसके पास कुछ पहनने को न था। भगवान ने उसकी परीक्षा के लिए दो उत्तम वस्त्र मार्ग में गिरा दिये, परन्तु वह किसी और का समझकर आगे चल दिया। फिर उसके सम्मुख ऐसे गूलन बिखेर दिये जिनमें सोना भरा था पर उसने उस धन को हाथ तक नहीं लगाया। भगवान ने सन्यासी का रूप धारण कर उसे स्वर्ण लेने को समझाया किन्तु वह यही कहता रहा कि परिश्रम से प्राप्त दाने ही मेरे लिए अमृत स्वरूप हैं। अन्त में वह सत्यव्रत के प्रभाव में बड़े ऋषि मुनियों के लिए दुर्लभ 'सत्यलोक' का भागी बना।

पाप शमन–

पाप शमन के उपाय पद्मपुराण सृष्टिखंड में बताये गये हैं। 'नन्दा' धेनु व्याघ्र उपाख्यान' में अज्ञानवश क्षत्रियवृतधारी राजा प्रभंजन के द्वारा अपने वत्स को स्तनपान कराती हुए निर्दोष मृगी को बाण से बांधने पर शाप से पीड़ित होकर सौ वर्ष तक व्याघ्र योनि में पड़कर प्रायश्चित करना पड़ा और सौ वर्षोपरान्त नन्दाधेनु से संवाद होने पर व्यघ्र योनि से छुटकारा प्राप्त हुआ। इसी प्रकार एक और कथानक 'प्रेत पंचक कथानकम्' है जिसमें पाप शमन का कारण सतां सम्भाषणं कुरु–सज्जनों से सम्भाषण करों, इसके अलावा पुष्करमाहात्म्यवर्णनम्' में पापों का नाश करने के लिए 'पुष्कर' तीर्थ विख्यात है। पुष्करं नाम विख्यातम् महापातकनाशनम्– यह पंक्ति सम्पूर्ण पाप शमन का निवारथ तीर्थ है। पदम् पुराण के अन्तर्गत पांप शमन के कई ऐसे तरीके बतलाए गये हैं। पंचमहापातकनाशकम् ब्रह्मपूजा' में पापको को दूर करने के लिए कार्तिक चतुर्दशी में ब्रह्ममुहुर्त में उठकर गुरु का स्मरण कर स्नान ध्यान से निवृत होकर इस पूजा को करने से पांच महापातकों से छुटकारा प्राप्त होता है, ऐसा बतलाया गया है। पातक–निवृत्ति के अतिरिक्त असुरों के विनाश की कई घटनाएं पदम् पुराण सृष्टि खण्ड में उद्धृत है।

सृष्टि के आदि में प्रकट होने वाले महर्षि कश्यप की पत्नियां अदिति और दिति बताई गई है। अदिति से देवताओं (देवी शक्तियों) की और दिति से दैत्य–दानवों (आसुरी शक्तियों) की

उत्पत्ति हुई देवता सद्गुण सम्पन्न तथा धर्म–मार्ग के अनुयायी थे और दानव पाशविक शक्ति तथा भोग–विलास में रत थे। क्योंकि दैत्यगण मुख्यतः अनियमित शक्ति में ही विश्वास रखने वाले थे और युद्ध में छल–कपट से काम लेते थे, इसलिए वे प्रायः देवगण को परास्त करके उनके स्वत्व का उपहरण कर लेते थे। ऐसे अवसर पर देवता भगवान की शरण में जाते और कोई न कोई मार्ग ढूंढ कर दैत्यों का विनाश कर डालते थे। ऐसी धर्म और अधर्म की कई कथाएं पौराणिक कथानकों में सुनाई गई हैं जिससे सामान्य जनता कुछ शिक्षा ग्रहण कर सके।

'वामनावतारचरित्रवर्णनम्' ऐसी ही एक कथा है जिसमें भगवान विष्णु द्वारा वामन अवतार धारण कर दानवराज वाष्कलि एवं अन्य दैत्यों का पाताल में प्रवेश कराया जाता है। ऐसी ही एक अन्य प्रसंग वृत्रासुरबधाश्रितकथानकम्' में वृत्र नामक असुर का वज्र से वध किया गया। इसमें भगवान त्वष्ट्रा के अस्त्र द्वारा वृत्रासुर का युद्ध श्रीमद्भागवत तथा विष्णुपुराण आदि में बड़े विस्तार से वर्णित है। 'तारकामय संग्राम मेंपापियों का विनाश अवश्यम्भावी है ऐसी शिक्षा पुराण के जानने वालों को मिलती है।

अन्याय के प्रति न्याय का एक प्रसंग सृष्टि–खण्ड में 'हिरण्यकशिपु' उपाख्यान में मिलता है। हिरण्य शिपु दानवों का अधिपति है। वह उग्र तपस्या के बल पर ब्रह्मा जी से वर पाकर देवगण को परास्त कर नीचा दिखाने की योजना बनाता है, किन्तु भगवान विष्णु नृसिंह रूप धारण कर अन्यायी को अपने नखों से उसका तेज नष्ट करते हुए मार डालते हैं। 'अन्धकासुरकथानक वर्णनम्' में भगवान शंकर द्वारा अन्धक नाम असुर का वध करने का प्रसंग है। ऐसे ही कई उपाख्यान 'षडाननेन तारेय बधः', 'बालकेयवध' 'यमन देवान्तक दुर्धर्ष वधः', 'इन्द्रेणा न्यनमुख्तिधः विष्णुनामधुदैत्यवधः' पदम् पुराण सृष्टि–खण्ड में दृष्टिगोचर होते हैं।

विचित्र कथाऐं–

पुराणों में ऐसी विद्याओं के प्रसंग वर्णित हैं, जिन पर आधुनिक मानव प्रायः विश्वास नहीं करता परन्तु पौराणिक काल में वे सत्य थी और जनसाधारण के मध्य उनका बहुलता से प्रयोग होता था। पद्म पुराण सृष्टि–खण्डान्तर्गत प्रमुख विद्यायें निम्न प्रकार हैं–

स्वेच्छारूपधारिणी विद्या–

इस विद्या के आधार पर एक ही मनुष्य अनेक रूप धारण करके भिन्न–भिन्न स्थानों में

विविध कार्यों का सम्पादन कर सकता है। पदम् पुराण के सृष्टि–खण्ड में राजा धर्ममूर्ति के चरित्र में विशेष रूप से इस विद्या का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। कंस की बहिन पूतना को भी यह विद्या आती थी। जिससे उसने एक ब्राह्मणी का रूप धारण करके कृष्ण को अपना विष मिश्रित स्तनपान कराया था। इसी प्रकार विष्णु आदि देवताओं द्वारा स्वेच्छा रूप धारण करने का भी उल्लेख मिलता है।

अणिमा विद्या–

इस विद्या के प्रभाव से छोटा सा रूप धारण किया जा सकता है। पदम् पुराण सृष्टिखण्डान्तर्गत विष्णु का वामन रूप धारण करना, व अग्नि का तोते का रूप धारण करना, अणिमा विद्या के अन्तर्गत आता है। ब्रह्मवैवर्त पुराण में इन्द्र का सूक्ष्म शरीर धारण करके मानसरोवर में प्रवेश करने का उल्लेख भी है।

मृत संजीवनी विद्या–

इसके आधार पर मृतक के शरीर में प्राण संचार किया जाता है। पद्म पुराण सृष्टि–खण्ड में श्री राम द्वारा ब्राह्मण पुत्र को जीवित का प्रसंग उल्लिखत है।

आभार–

लेखिका श्रद्धेय गुरुवर प्रो. जे.के. गोदियाल के प्रति सादर आभार प्रकट करती है जिनके कुशल निर्देशन में उसने शोध की शिक्षा ग्रहण की।

सन्दर्भ ग्रन्थ :–

1. अग्निपुराण–चौखम्भा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी–1
2. अमरकोश–अमर सिंह, आनन्दाश्रम, पूना
3. अलंकार सर्वस्व–चौखम्भा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी – 1971
4. उत्तररामचरितम्–डा0 कपिलदेव द्विवेदी, रामनारायण लाल–वेनी माधव प्रकाशन, इलाहाबाद
5. कठोपनिषद–वाणी विलास संस्कृत पुस्तकालय, काशी
6. कादम्बरी–रामनायण लाल–वेनी माधव–प्रकाशन इलाहाबाद
7. काव्य प्रकाश–ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी, 1960
8. काव्यालंकार सूत्रवृत्रि–चौखम्भा, अमर भारती प्रकाशन, वाराणसी, 1977

9. काव्यशास्त्र मार्गदर्शन–वाइ.ई.एस. एण्ड कम्पनी, फव्वारा, दिल्ली (प्रथम संस्करण), 1970
10. कुमार सम्भव–रामनारायण लाल–वेनीमाधव प्रकाशन–इलाहाबाद
11. गुरुड़ पुराण– सरस्वती प्रेस, कलकत्ता, 1890
12. गौतम धर्मसूत्र– आनन्दाश्रम, पूना
13. चमत्कार चन्दिका–मेहरचन्द– लक्ष्मन दास, दिल्ली, 1972
14. चन्द्रालोक–मास्टरलाल एण्ड सन्स, वाराणसी, 1954
15. देवीभागवत्–वैंकटेश्वर प्रेस, मुम्बई।
16. नारद पुराण – आनन्दाश्रम पूना।
17. नारद पुराण–संस्कृति संस्थान, ख्वाजा कुतुब, वेदनगर, बरेली
18. नारदभक्ति सूत्र–श्री रामकृष्ण मठ, मद्रास, 1978
19. निरुक्त–यास्क, दुर्गाचार्यवृतिसहित, आनन्दाश्रम, पूना
20. पदम् पुराण–पं. श्री रामशर्मा द्वारा सम्पादित, संस्कृति संस्थान, ख्वाजा कुतुब वेदनगर बरेली (प्रथमखण्ड, 496 पृष्ठ)
21. पद्म पुराण–कल्याण अंक गीता प्रेस, गोरखपुर
22. पद्म पुराणम्–. श्री महामुनि वेदव्यास प्रणीतम्, 5 क्लाइब रोड़ कलकत्ता–1, 1957
23. पुराण दिग्दर्शन– पं. माधवाचार्य शास्त्री रचित, माधव पुस्तकालय प्रकाशन, देहली
24. पुराणतत्व मीमांसा–श्री कृष्णमणि त्रिपाठी, वाराणसी, 1961
25. पुराणर्यालोचनम्–चौखम्भा, सुरभारती ग्रन्थमाला प्रकाशन, वाराणसी, 1976
26. पुराण विमर्श–आचार्य बलदेव उपाध्याय, चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी–1, 616 पृष्ठ, 1965
27. ब्रह्म पुराण–मनसुखराय मोर प्रकाशन कलकत्ता
28. ब्रह्म पुराण – संस्कृति संस्थान, ख्वाजा कुतुब, वेदनगर, बरेली।